प्रेम वाहिनी

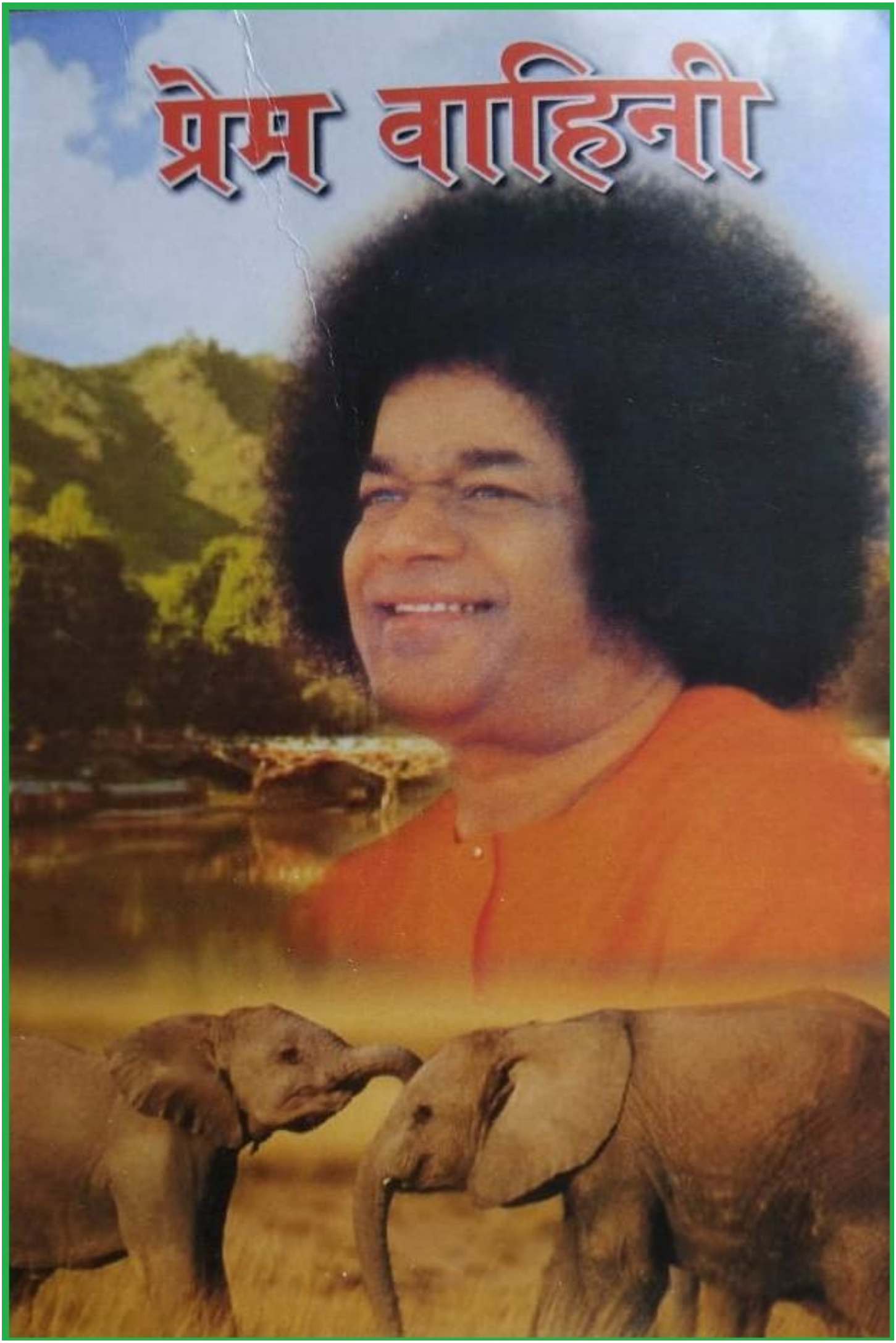

४

मानव जीवन की वास्तविक प्रकृति

ऊपरी तौर से देखने पर मानव जीवन खाने-पीने, परिश्रम करने और सोने का एक अनवरत चक्र सा प्रतीत होता है। परन्तु वास्तव में जीवन का इससे कहीं अधिक व्यापक अर्थ है; अधिक गम्भीर महत्व है। जीवन एक बलिदान है; यज्ञ है। प्रत्येक छोटे से छोटा कृत्य प्रभु के प्रति एक भेंट है। यदि दिन इसी समर्पण भावना के किए गए कृत्यों में बिताया जाता है तो निद्रा भी समाधि के अतिरिक्त और क्या होगी?

अपने को शरीर मान बैठना ही मानव का बड़ा अपराध है। उसने शरीर की सुख सुविधा के लिए, सुरक्षा के लिए विविध वस्तुओं का संग्रह किया है। आयु पाकर जब शरीर दुर्बल और असहाय हो जाता है, फिर भी वह किसी न किसी उपाय से इसे सक्षम और सशक्त बनाये रखने का प्रयास करता है। परन्तु मृत्यु को कब तक टाला जा सकता है? जब यमराज का सम्मन आ जाता है तो प्रत्येक को जाना ही पड़ता है। मृत्यु के समक्ष उच्चस्थिति, अभिमान और शक्ति सभी अदृश्य हो जाते हैं। इसलिए इसका अनुभव करके रात-दिन शुद्ध तन-मन, आत्मा से सभी प्राणियों की सेवा द्वारा आत्म-साक्षात्कार के प्रयास में लगे रहो। सेवा करने का साधन मानकर शरीर की रक्षा और क्षमता बनाये रखना आवश्यक है। परन्तु स्मरण रहे तुम शरीर नहीं हो; यह शरीर 'तुम' नहीं हो सकता। तत्वमसि, यह (भगवान) तुम्हीं हो। यह सर्वोच्च और पवित्रतम् महावाक्य है। तुम अक्षर आत्मतत्व हो उसी आत्मतत्व के लिए ही यह शरीर दिया गया है। इसलिए यहाँ और अभी परमेश्वर का साक्षात्कार करने का प्रयत्न करो; इस शरीर को किसी भी क्षण बलिदान के द्वारा भगवदार्पण करने के लिए तैयार रहो। इस शरीर पर अपने स्वामित्व का प्रयोग विश्व कल्याण के लिए करो। यह शरीर तो

एक यन्त्र मात्र है, ईश्वर प्रदत्त एक साधन है; उसी की इच्छा पूर्ति करने के लिए इसका प्रयोग करो।

परन्तु, जिस उद्देश्य के लिए यह साधन दिया गया है जब तक उसकी पूर्ति न हो जावे, तब तक यह तुम्हारा पवित्र कर्त्तव्य है कि सावधानी से इसे क्षति पहुंचने अथवा असमर्थ हो जाने से बचाते रहो। शीत ऋतु के झंझावात के प्रकोप से बचने के लिए ऊनी वस्त्र धारण किए जाते है; परन्तु जब शीत घट जाता है तो उन वस्त्रों को त्याग दिया जाता है। इसी प्रकार जब भौतिक जीवन के ठंडे झकोरे हमें लेश-मात्र भी प्रभावित न करें तो भौतिक शरीर की आवश्यकता ही समाप्त हो जाती है। व्यक्ति केवल सूक्ष्म शरीर में चैतन्य रहता है।

जब वर्षा होती है तो पृथ्वी से आकाश तक एक जलीय तल उतरता हुआ सा प्रतीत होता है। वास्तव में यह एक प्रेरणादायक सुन्दर दृश्य होता है; इसी के द्वारा प्रकृति तुम्हें अपने से एकत्व बोध अनुभव करने की शिक्षा देती है। तीन पाठ पढ़ने हैं— सृष्टि के पदार्थों की नश्वरता, मानव और माधव का क्रमशः सेवक और स्वामी की भूमिका का निर्वाह करना; यह सृष्टि ही पूजन की सामग्री है, मानव पुजारी है। और भगवान ही पूज्य है। इन्ही उपकरणों से जीवन का खेल खेला जाता है।

मनुष्य को तो इससे आनन्दित होना चाहिए कि पुरुषोत्तम ने मानव के आस-पास नूतन पदार्थों को इसलिए जुटाया है कि उनके द्वारा वह (भगवान) उससे अनेक विधियों द्वारा पूजा कार्य करा लेता है। उसे तो भगवान से नये-नये अवसर प्रदान करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए और पूजा के ऐसे अवसर प्राप्त कर हर्षित होना चाहिये। ऐसे दृष्टिकोण से अपार आनन्द प्राप्त होता है। ऐसे आनन्द से युक्त होकर जीवन बिताना एक परम सौभाग्य की बात है।

सूर्योदय से सूर्यास्त तक जो कुछ किया जावे वह पवित्र उद्देश्य से प्रेरित होवे, मानो यह भगवान की पूजा का ही एक कृत्य है। जिस प्रकार से पूर्ण खिला हुआ पुष्प चयन कर ताजी दशा में ही पूजा के लिए स्वच्छ और पवित्र रखने में सावधानी बरती जाती है, इसी प्रकार शुद्ध और पवित्र कार्यों

को भी सम्पन्न करने की अथक चेष्टा की जानी चाहिये।

यदि प्रतिदिन मस्तिष्क के नेत्रों के समक्ष यह दृष्टिकोण रखा जाये और इसी भावना से जीवन बिताया जावे तो यह भगवान की सेवा की एक लम्बी श्रृंखला बन जाती है जो कहीं पर से टूटी नहीं होती है। मेरे तेरे की भावना शीघ्र ही लुप्त हो जावेगी; स्व का संपूर्ण बोध ही मिट जायेगा। तब जीवन का वास्तव में "हरिपारायणम्" बन जाता है। "मैं सेवक हूँ। यह सृष्टि पूजन सामग्री है। भगवान ही वह स्वामी है जिसे पूजा जाता है।" जब ऐसी विचार स्थिति प्राप्त हो जाती है, भावना और कार्य इससे ओत-प्रोत हो जाते हैं, मेरे तेरे का समस्त भेद-भाव अदृश्य हो जावेगा।